IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

महाभारत में प्रधान–रस के रूप में निरूपित 'शान्त–रस' का विवेचन

(चन्द्र किशोर) असि0 प्रोफेसर संस्कृत – विभाग, ब्रह्मावर्त पी0जी0 कालेज, मन्धना, कानपुर नगर, उ0प्र0।

सारांश

महाभारत के सन्दर्भ में भारतीय परम्परा से यह ज्ञात होता है कि– ''यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित।'' अर्थात् जो इस महाभारत में प्राप्त होता है, वही अन्यत्र उपलब्ध है, जो वहाँ नहीं है, वह अन्यत्र कहीं भी नहीं है। अतः उस महासागर से सभी प्रकार के रत्नों को अन्वेषक खोज निकालते हैं। आचार्य आनन्दवर्धन ने महाभारत का प्रधान–रस या अङ्गी–रस–'शान्त–रस' को माना है। अङ्ग रूप में श्रृङ्गार, हास्य, वीर, करुण, रौद्र आदि सभी रसों का विधान हुआ है। अतः महाभारत में प्रधानभूत तथा मोक्षरूप 'शान्त–रस' ही है।

प्रस्तावना

आचार्य आनन्दवर्धन के अनुसार महाभारत में कौरवों और पाण्डवों के विरस–विनाश के कारणभूत–वैमनस्यजनक समाप्ति की रचना कर महामुनि व्यास ने अपने काव्य वैराग्योत्पादनरूप तात्पर्य को मुख्यतया पद्र र्शित करते हुए मोक्षरूप पुरूषार्थ तथा शान्त–रस मुख्य रूप से इस महाभारत काव्य का मुख्य विषय है, यह सूचित किया है–

महाभारतेऽपिशास्त्रकाव्यरूपच्छान्वयिनि वृष्णिपाण्डवविरसाव वैमनस्य दायिनी समाप्तिभुपनिबध्नता महामुनिना वैराग्यजनकतात्पर्यं प्रान्येन स्वप्रबन्धस्य दर्शयता मोक्षलक्षणः पुरुषार्थः शान्तो रसश्च मुख्यतया विवक्षाविषयत्वेन सूचितः।[1] आचार्य आनन्दवधर्न प्रधानरस के साथ अन्य रसों का जैसा अङ्गाङ्गिभाव होता है, वैसा प्रतिपादन करते हुए कहते हैं कि महाभारत में वास्तविक प्रधानभूत शान्तरस तथा मोक्षरूप पुरूषार्थ की उपेक्षा करके अन्य वीर आदि रस तथा धर्म आदि पुरूषार्थ के अपने प्रधान्य से भी चारूत्त्व मानने में कोई विरोध नहीं है–

अङ्गाङ्गिभावश्च यथा रसानां तथा प्रतिपादमेव। परमार्थिकान्तस्तत्त्वानपेक्षया शरीरस्येवाङ्गभूतस्य रसस्य च स्वप्रधान्येन चारूत्त्वमप्यविरूद्धम्।[2]

रसङ्गाधरकार पण्डितराज जगन्नाथ ने 'महाभारत' में – 'शान्त–रस' को प्रधान–रस माना है। उनके अनुसार –महाभारत आदि ग्रन्थों में 'शान्त–रस' ही प्रधान है, यह बात सब लोगों के अनुभव से सिद्ध है–

'तैरपि बाधकाभावान्महाभारतादिप्रबन्धानांशान्तरसप्रधानताया अखिललोकानुभवसिद्धात्त्वाच्च काव्ये सोऽवश्यं स्वीकार्यः'।[3]

मुख्य शब्द

प्रधानभूत शान्तरस, मोक्षरूपपुरूषार्थ, विरस–विनास, वैमनस्यजनक, कारणभूत, अङ्गाङ्गिभाव, चारूत्त्व, निरूपण।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रधानरस के रूप में निरूपित 'शान्त–रस' का परीक्षण।

महाभारत का प्रधान–रस 'शान्त–रस' ही है, इस सन्दर्भ में अनेक उदाहरण महाभारत में मिलते हैं। महाभारत के आदि पर्व में महार्षि वशिष्ठ द्वारा ऋषि पाराशर के समक्ष पितरों द्वारा और्व के क्रोध के निवारण की चर्चा की गई है। यहाँ क्रोध को शान्तकर व्यास ऋषि ने 'शान्त–रस' का ही उल्लेख किया है–

एवमुक्तास्ततः सर्वे राजानस्ते तमूरूजज।
ऊचूः प्रसीदेति तदा प्रसादं च चकार सः ।। [4]

महाभारत के 'भीष्म–पर्व' में श्रीकृष्ण ने अर्जुन के मोह को दूर करने के लिए अमृत–वचन रूपी गीता का उपदेश दिया है, जो कि 'शान्त–रस' का ही परिचायक है।
भगवान श्रीकृष्ण 'त्याग' को परमशान्ति का उपाय बताते हैं–

श्रेयो हि ज्ञानमज्यासाज्यज्ञानाद्ध्यानं विशिष्ये।
ध्यानात् कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरज।। [5]

अतः स्पष्ट है कि महाभारत में पम्र ुख रूप से 'शान्त–रस' व्याप्त है किन्तु जीवन के समस्त पक्षों का चित्रण होने के कारण इसमें सभी रसों का परिपाक होना स्वाभाविक है। अतः वीर, करुण, अद्भुत् आदि सभी रसों की विशेषताएं अङ्गरूप में विद्यमान हैं। महाभारत में प्रकृति के उद्दीपन कार्य के द्वारा नायक–नायिका के रूप–सौन्दर्य का वर्णन होने से कहीं–कहीं श्रृङ्गार–रस के उदाहरण भी मिल जाते हैं। नल–दययन्ती उपाख्यान में नल एवं दययन्ती के रूप–सौन्दर्य तथा उनके गुणों के वर्णन में श्रृङ्गार–रस की अभिव्यंजना होती है–

कन्दर्पं इव रूपेण मूर्तिमानभवत् स्वयंज।। विशिष्टया विशिष्टेन संगमों
गुणवान् भवेत्।। [6] महाभारत में आदि से अन्त तक अलौकिक शक्ति
तथा गुण–सम्पन्न पात्रों एवं उनके अद्भुत कर्मों का वर्णन होने से इसमें
अद्भतु –रस का भी प्रयोग मिलता है। भीष्म–पर्व में श्रीकृष्ण के
'विराट–रूप' के दर्शन होने पर अर्जुन के आश्चर्य–चकित रहने का
उल्लेख मिलता है–
अनेक वक्त्र नयनमनेकाद्भुत दर्शनज्। अनेक दिव्याभरणं
दिव्यानेकोद्यतायुधजे।। प्रणज्य शिरसा देवं कृतांजलिरभाषत्।। [7]

महर्षि व्यास ने महाभारत में 'करुण–रस' की सुन्दर एवं मार्मिक अभिव्यंजना की है। स्त्री–पर्व मे 'शोक' का ही प्रधान्य मिलता है। वीरों की मुत्यु के कारण उनकी पत्नियों का करुण–क्रन्दन' है तथा शोकाकुल गान्धारी एवं धृतराष्ट्र के हृदय की मार्मिक अभिव्यक्ति है। ऐसे अनेक वृतान्त हैं जिनसे 'करुण–रस' की अभिव्यक्ति होती है। वन में कुन्ती, धृतराष्ट्र आदि के अग्नि में जलकर मर जाने पर युधिष्ठिर आदि के 'शोक' की हृदय–स्पर्शी अभिव्यंजना है–

एतच्छ्रूत्वा च सर्वेषां पाण्डवानां महात्मनाज्। निर्याणं धृतराष्ट्रस्य
शोकःसमभवन महान्।। अन्वशोचन्त ते सर्वे गान्धारी च तपस्विनीज्।। [8]

क्रोध की प्रचण्डता के सौन्दर्य में महाभारत में रौद्र–रस' का उल्लेख मिलता है। सभा–पर्व में दुर्योधन द्वारा द्रौपदी का अपमान किये जाने पर भीम के क्रोध की सुन्दर अभिव्यक्ति है, जिसके अनुसार–क्राधे ा से भीम की आँखं लाल हो जाती है। तब वह, यह प्रतिज्ञा करता है कि यदि मैं अपनी इस गदा से दुर्योधन की जँघा न तोड़ूँ, तो मुझे अपने पूर्वजों की भाँति पुण यलोक की प्राप्ति न हो–

भीमसेनस्तामालोक्ये नेत्रे उत्फाल्य लोहिते। प्रोवाच् राजमध्ये तं सभां विश्राव यवन्निव।। वृक्षस्येव विनिश्चेरूः कोटरेज्यः प्रदह्यतः।। [9]

महाभारत मे ंभयङ्कर–रस' का भी उल्लेख है। यहाँ वीर पात्रों के कार्य न केवल विस्मित करने वाले हैं, अपितु भयोत्पादक भी हैं। द्रोण–पव र् में अर्जुन के आक्रमण से विरोधी सेना में 'भय' उत्पन्न हो जाता है। अर्जुन क ` 'देवदत्त' नामक 'शङख' के वादन से धोर शब्द सम्पूर्ण दिशाओं में व्याप्त हो जाता है, जिससे विपक्षी सेना 'चेतना–शून्य' होकर युद्धभूमि पर खड़ी रही। उनके घोड़े विकल हो आँखें खोलकर देखने लगे। उनके चारों पैर सिकुड़ गये तथा वे मूत्र एवं रूधिर–त्यागने लगे–

स देवदत्तमादाय शङ्खं हेमपरिष्कृतज्। दध्मौ वेगेन महता घोषेणपूरयन दिशः।। वाहास्तेषां विवृत्ताक्षाः स्तब्धकर्णशिरोधराः। विष्टब्धचरण मूत्रं रूधिरं च प्रसूस्रुवः ।। [10] महाभारत में 'वीभत्स–रस' के भी उदाहरण मिलते हैं। द्रोण–पर्व में अभिमन्यु–वध के उपरानत रणभूमि के वर्णन में 'वीभत्स–रस' की पुष्टि होती है, जिससे माँस–भक्षी जीव–जन्तुओं द्वारा रणभूमि में मृतकों के शरीर को क्षत–विक्षत करने तथा रूधिर पीने, चर्वी काटने एवं मृतकों के शरीरों को घसीटने क ` वर्णन में 'वीभत्स–रस' की अभिव्यंजना होती है–

अतीव हृष्टाः श्रृगालवायसा वकाःसुपणार्व ृकास्तरक्षवः। वयांस्यसृक्यपान्यथ रक्षसां गणाः पिशाचसंघासश्चसुदारूणारणे।। सुनन्दिताः प्राणमृतां क्षयङ्कराः समानभक्षाः श्वश्रृगालपक्षिणः।। [11]

यद्यपि महाभारत में 'शान्त–रस' प्रधान है, फिर भी यत्र–तत्र 'हास्य–रस' के उदाहरण प्राप्त होते हैं। विराट–पर्व में कौरव सने ा को देखकर विराट–पुत्र 'उत्तर' के भागने पर वृहन्नला वेशधारी अर्जुन भी रथ से कूदकर राजकुमार को पकड़ने के लिए अपनी लम्बी चोंटी हिलाते हुए लाल रंग की साड़ी और दुपटट् ` को लहराते हुए उसके पीछे दौड़े। यह दृश्य देखकर उनको जानने वाले कुछ सैनिक ठहाके मारकर हंसने लगे तथा शीघ्र गति में दौड़ते देख कौरव सेना भी हंसने लगी–

एकमुक्तवा तु कौन्तेयः सोऽवप्लुत्य रथोत्तमात्। तमन्वधावद् धावन्तं राजपुत्रं धनंजयः ।। सैनिकाः प्राहसन् केचित् तथारूपमवेक्ष्यतज्। तं शीघ्रममिधावन्तं सज्प्रेक्ष्य कुरवोऽब्रूवन्।। [12]

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि महाभारत में अनेक स्थानों पर 'शान्त–रस' के परिचायक के रूप में धार्मिक यज्ञ–अुनष्ठानों, यथा–राजसूय–यज्ञ, अवश्वमेध–यज्ञ आदि का उल्लेख मिलता है, जिनसे 'शान्त–रस' की अभिव्यक्ति होती है। क्योंकि धार्मिक कार्य मन के शान्त होने पर तथा सर्वजन कल्याण हेतु ही किये जात ` हैं। महाभारत के 'शान्ति–पर्व' में पंचशिख द्वारा 'मोक्षतत्त्व का विस्तृत विवचे न किया गया है, जिसमें 'शान्त–रस' प्रतीत होता है तथा श्रीकृष्ण, युधिष्ठिर, विदुर, भीष्म, नारद, व्यास आदि पात्रों में 'शम' की ही प्रधानता है। अतः महाभारतीय जीवन–दर्शन में 'शान्त–रस' का ही परिपाक है।

सन्दर्भ–सूची

1. आनन्दवर्धन (1998)। ध्वन्यालोक। सिद्धान्त शिरोमणि, विश्वेश्वर (ध्वन्यालोकः हिन्दी व्याख्या)। वाराणसी, भारत, ज्ञानमण्डल लिमिटेड– 4/5, पृ0–345
2. वहीं, 4/5, पृ0–345–46
3. जगन्नाथ (2016)। रसगङ्गाधर। झा, मदनमोहन (रसगङ्गाधर, संस्कृत–हिन्दी व्याख्योपेत)। वाराणसी, भारत, चौखम्बा–सरु भारती, प्रथमआनन, रस प्रकरण, पृ0–135
4. महाभारत, आदिपर्व–178–7
5. गोयन्दका, जयदयाल (सं0 2075)। श्रीमद्भगवदग्ीता (तत्त्वाविवेचनी हिन्दी टीका सहित)। गोरखपुर, भारत, गीताप्रेस–1/12/12
6. महाभारत, वनपव–ं 53/28–30
7. वही, भीष्मपर्व–35/10–14
8. वही, आश्रमपर्व–37/30–34
9. वही, रामापर्व–71/13–15 10. वही, द्रोणपर्व–18/8–10
11. वही, द्रोणपर्व–50/09–13
12. वही, विराटपर्व–38/30–32